दैनिक भास्कर

राष्ट्रीय संस्करण फरीदाबाद-दिल्ली, विक्रम संवत 2060 कार्तिक, कृष्ण पक्ष तृतीया, सोमवार 13 अक्टूबर 2003

मुद्दा

डब्ल्यूटीओ बनाम भोजन और जैव-सुरक्षा

फिलिप कलैट के अनुसार विकासशील देशों में समस्या भोजन की उपलब्धता की न होकर इसके समान वितरण की अधिक है।

भारत और बाहर के देशों में कृषि-जैव प्रौद्योगिकी का विकास अनेक विवादों में घिरा रहा है। डब्ल्यूटीओसम्मेलन और जैव-सुरक्षा पर प्रोटोकॉल के लागू हो जाने के संदर्भ में इन बहसों के कुछ विशिष्ट पहलुओं की जांच जरूरी है। कृषि-जैव प्रौद्योगिकी की शुरुआत बेहतर भोजन सुरक्षा विकसित करने की इसकी क्षमता के सिद्धांत पर आधारित है। मसलन, इस देश में जहां करोड़ों लोगों को पेट भर भोजन नहीं मिल पाता, कृषि-जैव प्रौद्योगिकी को पैदावार बढ़ाने और अधिक पौष्टिक फसलें देने के कारण प्रोत्साहित किया गया था। ये दावे हरित क्रांति द्वारा प्रस्तावित मॉडल से बढ़ते मोहभंग के जवाब के रूप में पेश किए गए थे, लेकिन जैव-प्रौद्योगिकी की किसानों को लाभ पहुचाने और भूखों को भोजन देने की क्षमता अभी तक व्यवहार में चरितार्थ नहीं हुई है। यह बात इसतथ्य से सामने आती है कि अभी तक जो संकर किस्में प्रयोग की जा रही हैं उनका मुख्य उद्देश्य पौष्टिक भोजन के लक्ष्य की पूर्ति करना नहीं है। प्रो-विटामिन ए चावल जैसे कुछ अपवाद जरूर हैं, लेकिन वहां भी दूसरी तरह के सवाल उठ खड़े होते हैं, क्योंकि उन्नत चावल भी संपूर्ण संतुलित आहार का विकल्प नहीं बन सकता।

आज कृषि-जैव प्रौद्योगिकी की सकारात्मक क्षमताओं की जांच करने से पहले इस बात की पड़ताल करना जरूरी है कि क्या इसे अपनाने को लेकर दिए जाने वाले तर्कों का ठीक से विश्लेषण किया जा चुका है। दरअसल, भारत और ज्यादातर विकासशील देशों में समस्या भोजन की उपलब्धता की नहीं, भोजन तक पहुंच और मौजूदा भोजन भंडार के वितरण की है। एफसीआई के पास मौजूद विपुल भंडार से यह बात साबित होती है। फिलहाल, भारत और कुल मिलाकर पूरा विश्व इतना भोजन उत्पादित कर रहा है कि समूची मनुष्यता को भोजन दिया जा सके, इसलिए इतना तो स्पष्ट है कि आज असल प्राथमिकता नई प्रौद्योगिकी को व्यवहार में लाने की नहीं, मौजूदा भोजन भंडारों तक लोगों की पहुंच बनाने की है। इस संदर्भ में जिन मुख्य सरोकारों को गंभीरता से संबोधित करने की जरूरत है वे हैं हरित क्रांति की सीमाएं, कृषि के भू-क्षेत्र को अधिक बढ़ा सकने की निरंतर कम होती संभावना तथा जनसंख्या वृद्धि, लेकिन इस संदर्भ में भोजन की असुरक्षा से संबंधित नीतिगत चर्चाएं केवल इन दूरगामी सरोकारों और कृषि-जैव प्रौद्योगिकी के स्थान तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिए। अत: बहुत जरूरी है कि इस संदर्भ में डब्ल्यूटीओ व अन्य प्रासंगिक राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय संगठनों में होने वाली बहसें मात्र कृषि-जैव प्रौद्योगिकी पर ही केंद्रित न हो जाएं। भोजन तक पहुंच का अभाव तथा उसका वितरण अधिक जरूरी और पहले ध्यान चाहने वाली समस्याएं हैं। ये चर्चाओं से ओझल नहीं होनी चाहिए।

कृषि-जैव प्रौद्योगिकी को अपनाने के समय से ही जैव-सुरक्षा के सरोकारों से जोड़ कर देखा जाता रहा है। इस संबंध में हमारे सामने वे चिंताएं आती हैं जो संकर पौधों के कारण पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले संभावित प्रभावों से जुड़ी हैं। इसी विशिष्ट चिंता के चलते जैव-सुरक्षा प्रोटोकॉल विकसित हुआ और उसे जैव विविधता सम्मेलन में अपनाया गया। 11 सितंबर 2003 से प्रभाव में आने वाले इस प्रोटोकॉल का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि कृषि-जैव प्रौद्योगिकी के संभावित लाभ पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य पर इसके विपरीत प्रभावों के कारण घाटे का सौदा न बन जाएं। कुछ मौजूदा संकर बीज, जैसे बीटी कॉटन, खेतों में कीटनाशकों के प्रयोग को कम करने के उद्देश्य से विकसित किए गए हैं। सैद्धांतिक आधार पर यह रुझान स्वागत योग्य है, क्योंकि आज की खेती में कीटनाशकों का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है और पर्यावरण तथा मानव स्वास्थ्य पर उसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, लेकिन व्यवहार में मौजूदा साक्ष्य अनिवार्य रूप से यह साबित नहीं करते कि बीटी कॉटन जैसी किस्मों से कीटनाशकों के कुल प्रयोग में कोई बड़ी कमी आई है। ऐसा इसलिए है कि रूपांतरित किस्में किन्हीं विशेष कीड़ों के विरुद्ध ही प्रभावी होती हैं। पर्यावरण के लिहाज से देखें तो कृषि-जैव प्रौद्योगिकी के प्रभाव केवल सकारात्मक ही नहीं रहे हैं। संभावित जेनेटिक प्रदूषण मात्र एक सैद्धांतिक आधार पर संलिप्त खतरा नहीं, बल्कि वास्तविक चिंता का विषय है। इन चिंताओं का दायरा अवांछित जेनेटिक प्रदूषण से लेकर व्यापारिक या गैर-व्यापारिक संस्थानों द्वारा अपनी हितपूर्ति के लिए संकर किस्मों के अनियंत्रित प्रयोग तक फैला है। फिर कुछ रूपांतरित किस्मों के कीटनाशकों के प्रयोग को कम करने तथा पर्यावरण व मानव स्वास्थ्य को लाभ पहुंचाने के संभावित सकारात्मक प्रभाव अभी असंदिग्ध रूप से प्रमाणित नहीं हुए हैं। कुल मिलाकर कृषि-जैव प्रौद्योगिकी को एक ऐसी संभावित सकारात्मक घटना के रूप में देखा जाना चाहिए जो भविष्य में भोजन असुरक्षा को कम करने में मददगार हो सकती हैं, बशर्ते जोर उपयुक्त विशिष्टताओं और किस्मों पर रहे तथा इसके नकारात्मक पर्यावरणीय प्रभावों को पूरी तरह नियंत्रित किया जा सके। फिलहाल नीतिगत परिप्रेक्ष्य के लिहाज से राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तरों पर कृषि-जैव प्रौद्योगिकी नीति निर्माताओं का प्रमुख सरोकार नहीं होनी चाहिए। कुल मिलाकर कृषि-जैव प्रौद्योगिकी को अपनाने और खासतौर पर भोजन देने वाली फसलों के मामले में विकासशील देशों को बहुत सावधानी से आगे आना चाहिए। भले ही डब्ल्यूटीओ में व्यापारिक पहलुओं पर जो भी व्यवस्था विकसित हो, लेकिन इन देशों को चर्चा और सौदेबाजी के दौरान सामाजिक-आर्थिक चिंताओं और पर्यावरण संबंधी सरोकारों को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी चाहिए।